संत साहित्य और वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसकी प्रासंगिकता

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय,राजस्थान
संरक्षक, आचार्यकुल

संत किसे कहते हैं? **''जो शांत होता है वह संत कहलाता है।''** कहा गया, **''सदा दिवाली संत के, बारह महिने बसंत के''।** यानि संत हर पल प्रसन्न रहता है। भारतीय संस्कृति ऋषि प्रधान, आध्यात्मिक एवं मूल्यों की संस्कृति है। भारतीय संस्कृति में भौतिकता एवं आध्यात्मक का समन्वय है। भारतीय संस्कृति बाह्य एवं भीतरी जगत् में संतुलन स्थापित करती है। भारतीय संस्कृति में त्याग, अनासक्ति, मैत्री, प्रमोद, करुणा एवं मध्यस्थता भावनाओं को प्रमुख स्थान दिया गया है। इन भावनाओं को जीने वाला संत कहलाता है। हमारी जीवन पद्धति में बह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास चार आश्रमों का प्रति 25–25 वर्ष उम्र के लिए विभाजन किया गया है। यहां संन्यास आश्रम भी एक जीवन पद्धति का अंग है। संन्यासी को संत कहा गया है। संत उसे कहते है जिसने सभी कामनाओं पर विजय पा ली हो। कवि ने ठीक ही कहा है–

चाह गई चिंता मिटी, मनुआ बेपरवाह।

जिनको कुछ न चाहिए, सो ही शंहशाह।।

फक्कड़ या फकीर को संत कहा जाता है, जो कि कामनाशून्य होता है, निस्पृह होता है। इसी कारण महान् से महान् व्यक्ति भी संतो के चरणों में झुकता है। कंचन–कामिनी का त्यागी संत कहलाता है। वस्त्र धारण करने मात्र से ही संत नहीं होता उसे क्लेश–क्रोध, मान, माया एवं लोभ यानि कषाय (राग–द्वेष) का अल्पीकरण करना होता है। वही संत जब पूर्ण रुप से राग–द्वेष विजेता हो जाता है, तब परमात्मा बन जाता है। चेतना के तीन स्तर होते हैं–जीवात्मा, अंतरात्मा एवं परमात्मा। राग–द्वेष का जीवन जीने वाला सामान्य व्यक्ति जीवात्मा कहलाता है। जब उसी जीव को आत्म ज्ञान होता है तब

वह संत–महात्मा बनकर अंतरात्मा बन जाता है। संत यानि अंतरात्मा। साधना करते–करते सम्पूर्ण राग–द्वेष विजेता होने पर परमात्मा बन जाता है।

संत समाज का एक वंदनीय, पूजनीय, अनुकरणीय एवं स्तुत्य व्यक्ति होता है। उसके द्वारा रचित साहित्य अध्यात्म से ओतः प्रोत होता है। संत के सम्प्रदाय अलग–अलग हो सकते हैं, लेकिन धर्म या अध्यात्म एक ही होगा। सभी धर्मों, सम्प्रदायों रुपी नदियां अध्यात्म रुपी समुद्र में विलीन हो जाती हैं। **जीवित प्राणी को किंचित मात्र भी दुःख न दिया जाय यह सबसे बड़ा अध्यात्म है, जिसे मानव धर्म भी कहा जा सकता है।** समाज में व्यक्तियों पर मानवता या इंसानियत के गुणों का प्रभाव केवल संत–वाणी से ही पड़ता है, क्योंकि उसकी वाणी या उसका साहित्य अनुभवसुदा होता है। कोई भी बात जीकर कही जाती है वह प्रभावशाली होती है। क्योंकि वह प्राण प्रतिष्ठित हो जाती है। जब तक भगवान की मूर्ति को मंदिर में प्राण–प्रतिष्ठा कर स्थापित नहीं की जाती तब तक वह मात्र मूर्ति ही होती है, भगवान–बिंब नहीं बनती। प्राण–प्रतिष्ठा के बाद ही उसकी पूजा होती है। इसी प्रकार क्योंकि संत, संतता का जीवन जीता है, उसके द्वारा लिखा गया साहित्य प्राण प्रतिष्ठित होकर ग्रहणीय बन जाता है।

किसी भी धर्म–सम्प्रदाय के संत द्वारा रचित साहित्य ही आज के परिप्रेक्ष्य में शत–प्रतिशत प्रांसगिकता है। संत साहित्य में अध्यात्म, जीवन निर्माण के सूत्र पाये जाते हैं, जिनको धारण कर व्यक्ति एक अच्छा इंसान बन सकता है। **सभी संतो के साहित्य का उद्देश्य आध्यात्मिक–वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण करना है।** ऐसा व्यक्ति भौतिक जीवन जीते हुए भी अध्यात्म को नहीं भूलेगा। आध्यात्मिक व्यक्ति किसी का शोषण नहीं करेगा, किसी प्राणी को दुःख नहीं देगा। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज में हिंसा, व्याभिचार, लूट–खसोट, धोखा–धड़ी, आतंकवाद, असंवेदनशीलता तथा घृणा चरम सीमा पर है। अगर हमें स्वस्थ एवं सुखी समाज की रचना करनी है तो संत–साहित्य का प्रचार–प्रसार करना होगा, उन पर प्रवचन करवाने होंगे तथा जीवन में ढालने का आसान तरीका बताना होगा यानि संत साहित्य को प्रेक्टिकल बनाना होगा।

प्राचीन धार्मिक ग्रन्थों रामायण, महाभारत, आरण्यक, ब्राह्मण, वेद, उपनिषदों का अवलोकन करें तो उदाहरण के तौर पर राजा दशरथ, राजा राम, पाण्डवों कौरवों सभी पर

मुनि वशिष्ठ, भीष्म पितामाह, द्रोणाचार्य जैसे संतों का अंकुश था। राजाज्ञा पारित करने से पूर्व संत गुरु का अनुमोदन करवाना जरुरी था, क्योंकि तभी वह राजाज्ञा जनहितार्थ होती थी। संत साहित्य से सर्व कल्याण, जगत् कल्याण, जय जगत् की भावना उजागर होती है। संत साहित्य **''सर्वे भवन्तु सुखिन :, सर्वे भवन्तु निरामया''** की भावना से लिखा जाता है। अतः हम निष्कर्ष की भाषा में बात करें तो जितनी संत– साहित्य की आवश्यकता भगवान महावीर, भगवान बुद्ध या वेदों, उपनिष्दों के समय में थी, उससे आज कई गुणा ज्यादा प्रांसगिकता है। क्योंकि अभी कलयुग चल रहा है, समय दिनों–दिन खराब आ रहा है। मानवीय, आत्मिक मूल्य गिर गये हैं। ऐसी विषम परिस्थिति में संत–साहित्य ही एक आशा की किरण है, वही स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकता है। अतः आज के परिप्रेक्ष्य में संत–साहित्य की शत–प्रतिशत पूर्व से अधिक प्रासंगिकता है। अगर हमने संत–साहित्य को प्रमुखता नहीं दी तो समाज पतन के गर्त में चला जायेगा जिसे ईश्वर भी नहीं बचा सकेगा।